हिन्दी दलित साहित्य पर डॉ. अम्बेडकर का प्रभाव

डॉ. देवी प्रसाद
(सह आचार्य–हिन्दी)
एस.एन.के.पी.राजकीय महाविद्यालय, नीमकाथाना (सीकर)

सारांशः– वर्तमान में बदलते परिवेश के चलते सामाजिक परिवर्तन की दिशा में निरंतर बढ़ते कदमों व रहन–सहन के नए–नए तौर–तरीकों और सम्पूर्ण मानव समाज में आ रहे परिवर्तन के साथ ही दलितों के जीवन में भी समानांतर परिवर्तन नजर आता है। ऐसे में दलितों द्वारा रचित साहित्य में भी सकारात्मक परिवर्तन आना और उसका दिनों–दिन निखरना भी स्वाभाविक है। दलित–साहित्य के लगातार बदलते तेवर की चर्चा आजकल कहीं न कहीं, किसी न किसी रूप में, किसी न किसी पत्र–पत्रिका में पढ़ने को मिलती रहती है। न कवल इतना अपित् नित्य–प्रति कहीं न कहीं दलित–साहित्य को लेकर अलग–अलग विषयों पर विभिन्न संस्थाओं द्वारा क्रमवार गोष्ठियाँ होती नजर आने लगी हैं। इसी क्रम में अम्बेडकरवादी कविता (साहित्य) की दशा और दिशा पर बहस छिड़ना कोई नई बात नहीं है। सामाजिक दृष्टि से उत्पीड़ित व्यक्ति की अभिव्यक्ति ही अम्बेडकरवादी कविता (साहित्य) का उद्देश्य है। सामाजिक असमानता और वर्तमान पीढ़ी में समानता के प्रति व्याप्त व्याकुलता ही अम्बेडकरवादी कविता (साहित्य) का मूल है।

मुख्य शब्दः– समतामूलक समाज, छूआछूत, जातिवाद, अमानवीय अत्याचार, भीम, पतवार, अंधविश्वास, कर्मकाण्ड, कामांध, मुक्तिदाता।

मूलपाठः–समय गतिशील है। समय बदलने के साथ–साथ बहुत कुछ बदलता है। समाज बदलता है... संस्कृति और सभ्यता बदलती है। राजनीतिक, सामाजिक और धार्मिकता की मूल धारणा बदलने के मार्ग पर चल पड़ती है। समाज की बदलती मान्यताओं के साथ–साथ साहित्यिक मान्यताओं में भी समाज के समानांतर बदलाव देखने को मिलते हैं। बदलते परिवेश के चलते हम यहाँ दलित साहित्य में कविता के बदलते तेवर की बात करेंगे।

समसामयिक परिस्थितियों में आजकल दलित साहित्य देश की सभी भाषाओं में लिखा जा रहा है। हिन्दी भाषा में भी गंभीर दलित साहित्य लेखन हो रहा है। दलित साहित्य में कविता का दलित साहित्य के उद्‌भव से ही दबदबा रहा है। स्वरूप चाहे जैसा भी रहा है। दलित कविता अनुभव के आधार पर उभरी है न कि साहित्यिक मानदण्डों को आधार मानकर। दलित साहित्य के उद्‌भव से ही हिन्दी में दलित साहित्य विशेषकर कविता, एक प्रकार का विरोध, आक्रोश और क्रोध दलित साहित्य का अंग रही है। इसमें समाज से बहिष्कृत किये जाने का, समाज के द्वारा पीड़ित हो जाने का जिक्र है। सवर्ण समाज के द्वारा सदियों से उन्हें हाशिये पर रखे जाने के बाद दलित उस रूढ़ बंधन से निकलने की कोशिश में हैं। इस संघर्ष से हम दलित साहित्य में रूबरू होते हैं। इस संघर्ष में समानता, समरसता और सामाजिकता का आक्रोशपूर्ण आग्रह दिखाई देता है।

दलित के शोषण के दो मुख्य कारण हैं गरीबी और अशिक्षा। हीरा डाम अपनी कविता 'अछूत की शिकायत' (जो सन् उन्नीस सौ चौदह में सरस्वती पत्रिका में छपी) में भगवान से शिकायत करते हैं कि आप प्रहलाद, गजराज, विभीषण और द्रौपदी की रक्षा में तत्परता दिखाते हैं, हम ने ऐसा क्या अपराध किया है कि हमारी विनती तनिक नहीं सुनते। किंतु अफसोस कि आज भी दलित के नए पुराने अनेक कवियों का अपना पुराना मुहावरे में कम ही बदलाव देखने को मिलते हैं। किंतु लिखा खूब जा रहा है। दलित साहित्य की विविध विधाओं में अनेक किताबें निरंतर प्रकाशित हो रही हैं। जो खास बात जो नजर आती है कि अमूमन दलित कवियों का मानना है कि उनकी कविता यथार्थजीवी हैं, पर उस यथार्थ का वे जैसा प्रयोग और संवाद पेश करते हैं, वह आधा– अधूरा और मुगालतों से भरा हुआ दिखता है।

हिन्दी दलित कविता को समझने के लिए डॉ. भीमराव अम्बेडकर के जीवन–दर्शन को जानना आवश्यक है। डॉ. अम्बेडकर हिन्दी दलित कविता के प्रेरणास्रोत हैं। डॉ. अम्बेडकर ने अपना सम्पूर्ण जीवन शोषितों, पीड़ितों, अस्पृश्यों की सेवा में समर्पित कर दिया। उन्होंने दलित जातियों को शिक्षित बनो, संगठित रहो और संघर्ष करो का मूल मंत्र दिया। अम्बेडकर ने दलित समाज को राजनीतिक रूप से ताकतवर होकर अपना अधिकार हासिल करने की शिक्षा दी है। समूचे दलित काव्य पर अम्बेडकर की समाजपरक और राजनीतिपरक विचारधारा का परिपूर्ण प्रभाव रहा है। डॉ. अम्बेडकर के वैचारिक लेखक, साहित्यकार और यथार्थवादी चिंतक के व्यक्तित्व ने दलित साहित्य को बहुत प्रभावित किया है। ओमप्रकाश वाल्मीकि स्पष्ट शब्दों में कहते हैं, "दलित चेतना का सोधा संबंध अम्बेडकर–दर्शन से है, वही प्रेरणा–स्रोत भी हैं। सामाजिक उत्पीड़न, सामंती सोच, वर्ण–व्यवस्था से उपजी ऊँच–नीच ने दलितों को शताब्दियों से मानसिक गुलामी में जकड़कर रखा हुआ है। उसकी मुक्ति के तमाम रास्ते बंद थे, इस गुलामी से मुक्त होने का विचार ही दलित चतना है, जिसे ज्योतिबा फूले और डॉ. अंबेडकर ने दार्शनिक आधार दिया।"[1] डॉ. अम्बेडकर ने दलितों को अपने अधिकारों को प्राप्त करने के लिए जागरूक किया। अम्बेडकर ने कहा कि जन्म के आधार पर किसी भी व्यक्ति में कोई भेदभाव नहीं है। उन्होंने दलितों को अपने अधिकारों को प्राप्त करने हेतु अपने इतिहास को जानने के लिए प्रेरित किया। डॉ. अम्बेडकर ने अनेक पुस्तकों की रचना की जैसे–'शूद्रों की खोज', 'अछूत कौन और कैसे', 'जाति की उत्पत्ति और स्वरूप', 'रुपये की समस्या', 'जाति प्रथा का उन्मूलन', 'कांग्रेस और गाँधी ने अछूतों के लिए क्या किया', 'पाकिस्तान अथवा भारत का विभाजन', 'मिस्टर गाँधी और अछूतों का उद्धार', 'भगवान बुद्ध और उनका धम्म' आदि। डॉ. अम्बेडकर द्वारा रचित साहित्य ने दलितों में आत्मसम्मान जगाने का अभूतपूर्व कार्य किया। डॉ. डी. आर. जाटव ने अम्बेडकर के साहित्य के महत्त्व पर प्रकाश डालते हुए लिखा है, ''उनका साहित्य काल्पनिक नहीं है, बल्कि तथ्यात्मक और यथार्थवादी है, जिसमें दलित–पीड़ित, कमजोर–दरिद्र, स्त्री–बच्चों की करुण कथाएं मिलती हैं। उनकी दयनीय स्थितियों के विवरण के साथ–साथ संबंधित समस्याओं का उनके साहित्य में सजीव चित्रण मिलता है।''[2] प्रसिद्ध दलित साहित्यकार सूरजपाल चौहान दलितों के जीवन और 'दलित कविता' पर डॉ. अम्बेडकर का प्रभाव स्वीकार करते हुए लिखते हैं:–

''मित्र यदि बाबा साहेब

साहित्य सृजन न करते

तो न मैं आज अधिकारी होता

और न लेखक और कवि।''[3]

सभी दलित साहित्यकारों ने दलित साहित्य पर डॉ. अम्बेडकर के प्रभाव को स्वीकार किया है। हिन्दी दलित कविता की प्रारम्भिक कविताओं में डॉ. अम्बेडकर का स्तुतिगान किया गया है। इन कवियों ने बाबा साहब को अवतार बताकर उसकी पूजा–अर्चना करने की बात कही है। डॉ. तेजसिंह 'हिन्दी दलित कविता' को डॉ. अम्बेडकर के विचारों को जन–जन तक चहुँचाने का माध्यम मानते हैं। उनके अनुसार, ''अगर पहले की कविता कभी–कभार अत्यधिक वैचारिक आग्रह की वजह से डॉ. अंबेडकर के विचारों का सीधा–साधा प्रचार करके अपने आपको स्तुतिगान तक सीमित करती रही है, तो शायद इसकी सबसे बड़ी वजह यह रही कि वह अपने मुक्तिदाता डॉ. अंबेडकर के विचारों को जन–जन तक पहुँचाना चाहती है ताकि दलितों के सामाजिक सांस्कृतिक आंदोलनों को एक पुख्ता आधार प्रदान किया जा सके। अपने इस महत्त्वपूर्ण उद्देश्य में वह सफल भी रही है। अगर साहित्य की सामाजिक–सांस्कृतिक आंदोलन के विकास में कोई सार्थक भूमिका रही है तो दलित कविता की इसके विकास में सक्रिय भूमिका रही है। इससे इंकार करने का मतलब है, दलित कविता की सामाजिक सरोकार की भूमिका से इंकार करना।''[4] हिन्दी दलित कविता डॉ. अम्बेडकर की विचार दृष्टि को आत्मसात करके विकास की ओर अग्रसर है। डॉ. अम्बेडकर ने भारतीय सभ्यता, संस्कृति में व्याप्त बुराइयों के संबंध में कहा, ''कुछ लोग कहते हैं कि हिन्दू सभ्यता छः हजार वर्ष पुरानी है, कुछ लोगों को इतने से संतोष नहीं होता, वे उसे उससे भी पुराना सिद्ध करना चाहते हैं। मुझे इस बात का अफसोस है कि इस पुरानी सभ्यता ने पांच

करोड़ अस्पृश्य, दो करोड़ आदिवासी और लगभग पचास लाख अपराधी जातियों को जन्म दिया है? यह कैसी सभ्यता है जिसके परिणाम इतने शोचनीय हैं? कहीं बुनियादी खराबी है। मैं समझता हूँ, हिन्दूओं को अब इस दृष्टि से इस बात पर सोचना चाहिए। क्या इस तरह की सभ्यता गर्व करने योग्य है? उन्हें इस पर एक दो बार नहीं, सौ बार सोचना चाहिए कि इस तरह के परिणामों के बावजूद उन्हें सभ्य कहा जा सकता है?''[5] इस प्रकार हम देखते हैं कि डॉ. अम्बेडकर ने धर्म के नाम पर चले आ रहे अन्याय और असमानता का विरोध किया है। डॉ. अम्बेडकर ने वंचित समुदाय में नव आशा और विश्वास का संचार किया है। वे इस समाज के लिए मझधार दमें पतवार के समान हैं। तभी तो कवि पी.डी.टण्डन ने अपनी कविता 'बुद्ध का अवतार है अम्बेडकर' में लिखते हैं:—

''हुंकार है आम्बेडकर, ललकार है आम्बेडकर।

शोषित जनों के नाव का, पतवार है आम्बेडकर।।

इन्सान को इन्साफ दे, इंसा बना दिया।

उजड़े हुए चमन में, बहार है आम्बेडकर।।''[6]

डॉ. अम्बेडकर का प्रभाव न केवल हिन्दी दलित कविता पर अपितु 'मराठी दलित कविता' पर भी व्यापक प्रभाव दखने को मिलता है। डॉ. पुरुषोत्तम सत्यप्रेमी 'दलित साहित्य' पर डॉ. अम्बेडकर के प्रभाव को स्वीकार करते हुए लिखते हैं, ''बुद्ध के प्रभाव में लिखे गए जिस साहित्य को ब्राह्मणों ने आठ सौ वर्ष पूर्व नष्ट कर दिया था, उसे बाबा साहेब डॉ. अम्बेडकर ने पुनर्जीवित करने का अभियान छेड़ा। यही कारण है कि बिना अम्बेडकरी विचारधारा के दलित साहित्य की बात नहीं की जा सकती, आज की स्थिति में डॉ. अम्बेडकर के जीवन संघर्ष और उनके विचार दशन की व्यापकता ही दलित साहित्य के आस्वादन का धरातल है।''[7] डॉ. अम्बेडकर ने वंचित समाज को नई दिशा देने का कार्य किया है।

जाति प्रथा किसी भी समाज के विकास में प्रमुख बाधा है। अगर हमारे देश की बात की जाए तो हम पाते हैं कि यहाँ बहुसंख्यक वर्ग ने इस जाति के कारण युगों से परेशानियाँ झेली हैं। बाबा साहब समतावादी समाज की स्थापना करना चाहते थे, इसलिए उन्होंने जाति प्रथा का घोर विरोध किया। उन्होंने हिन्दू धर्म के कल्पित ईश्वर को नकारते हुए कहा कि दलितों को पाखण्ड और पुरातन परम्पराओं को छोड़कर वैज्ञानिक दृष्टिकोण को अपनाना होगा। डॉ. अम्बेडकर के अनुसार स्वतंत्रता और समानता का जीवन में सर्वोपरी महत्त्व है। डॉ. अम्बेडकर के अनुसार उनके दर्शन में समता, स्वतंत्रता और भ्रातृत्व ये तीन शब्द निहित हैं। लेकिन किसी को यह नहीं समझना चाहिए कि मैंने इन शब्दों को फ्रांस की क्रांति से लिया है। मैंने ऐसा नहीं किया। मेरे दर्शन की जड़ें धर्म में हैं, न कि राजनीति विज्ञान में, मैंने उन्हें अपने गुरु बुद्ध से सीखा है। डॉ. अम्बेडकर के इन विचारों का प्रभाव दलित कविता पर देखने को मिलता है। ''बाबा साहब अम्बेडकर ने मानवतावाद को सर्वोच्च स्थान दिया है। अम्बेडकर प्रेरित दलित साहित्य ने मनुष्य को केन्द्र माना है। मनुष्य की स्वतंत्रता की घोषणा की है। मानव की मुक्ति को प्रोत्साहित करने वाला, मनुष्य को महान बनाने वाला, वंश, वर्ण और जाति श्रेष्ठता का कठोर विरोध करने वाला साहित्य ही दलित साहित्य होता है। मनुष्यता दलित साहित्य का धर्म है। इसलिए इस संसार में मनुष्य की अपेक्षा और कोई भी काल्पनिक या सांसारिक वस्तु महान नहीं है। जो संस्कृति, समाज या साहित्य मनुष्य को लघु बनाए, उसके विरुद्ध दलित साहित्य विद्रोह करता है। यह विद्रोह अम्बेडकरी विचार प्रणाली का अविभाज्य अंग है। दलित साहित्य की समीक्षा अम्बेडकर विचार से करनी होगी, क्योंकि अम्बेडकर विचार ही इस साहित्य की प्रेरणा है।''[8] इसमें कोई दो राय नहीं है कि दलित साहित्य डॉ. अम्बेडकर के जीवन–दर्शन को आधार बनाकर आगे बढ़ रहा है।

डॉ. अम्बेडकर का जन्म वंचित समाज के लिए बहुत महत्त्वपूर्ण है। न जाने कितने अवतारों की बात की जाती है परन्तु उन अवतारों में से काइ भी वंचित समाज के लिए कार्य करता दिखाई नहीं देता है। वंचित समाज युगों से इन तथाकथित देवताओं की पूजा–अर्चना करता आ रहा है परन्तु इसका उन्हें कोई लाभ नहीं

हुआ। उनकी स्थिति में कोई परिवर्तन नहीं हुआ। सर्वविदित सत्य है कि जब तक वक्ति स्वयं संघर्ष नहीं करेगा तब तक कुछ नहीं होगा। प्रसिद्ध दलित साहित्यकार एवं समालोचक कंवल भारती ने दलित साहित्य पर डॉ. अम्बेडकर के प्रभाव के संबंध में लिखा है, ''इसमें संदेह नहीं कि भारत की गुलाम कौम के लिये डॉ. आंबेडकर सिर्फ एक नेता नहीं हैं, उसके मुक्तिदाता भी हैं। हजारों साल से दलित जिन काल्पनिक देवी–देवताओं की पूजा करते आ रहे थे, उनमें से किसी ने भी उनकी गुलामी दूर नहीं की थी। बीसवीं शताब्दी में डॉ. आंबेडकर ही उनके लिये एक ऐसे मसीहा बनकर आये, जिन्होंने उन्हें मनुष्य की गरिमा दिलायी, मानवीय अधिकार दिलाये और शासन–प्रशासन में भागीदारी दिलायी। इसलिए यदि दलित कवियों ने उन्हें भगवान के स्तर पर प्रतिष्ठित किया, तो इसे अस्वाभाविक नहीं कहा जा सकता। उनके लिये डॉ. आंबेडकर उस राम से बेहतर थे, जिसने गौओं और ब्राह्मणों की रक्षा के लिये जन्म लिया था, वे उस कृष्ण से महान थे, जो दिन–भर पिछड़ी जातियों की जवान लड़कियों के साथ रास रचाता था, वे उस शिव से श्रेष्ठ थे, जो एक मोहिनी के पीछे कामांध होकर भाग रहे थे, और उस विष्णु से उत्तम थे, जिसका मुख्य काम दूसरों की स्त्रियों का शील भंग करना था। डॉ. आंबेडकर ऐसे व्यक्ति थे, जो अछूत जाति में जन्मे थे और अछूतों के उद्धार के लिये कृत–संकल्पित थे। इसलिये उनका जो महत्व दलितों के लिये था, वह अन्य लोगों के लिये सचमुच नहीं हो सकता था। उनके प्रति जो कृतज्ञता दलित दिखा सकते थे, वैसी कृतज्ञता कोई गैर–दलित नहीं दिखा सकता था। यहो कारण है कि हिंदी साहित्य में डॉ. आंबेडकर के संबंध में किसी भी द्विज लेखक की कोई रचना नहीं मिलती, जबकि गांधी की प्रशंसा में उन्होंने कविताओं से लेकर महाकाव्य तक और कहानियों से लेकर उपन्यास तक की भरमार कर डाली है। इसलिए ये दलित कवि ही थे, जिन्होंन अपनी रचनाओं में डॉ. आंबेडकर को जीवित रखा।''[9]

डॉ. अम्बेडकर वैज्ञानिक सोच को स्वीकार करते हैं। उन्होंने भाग्य, भगवान, पुनर्जन्म, अन्धविश्वास, पूजा–पाठ, कर्मकाण्ड, स्वर्ग–नरक, पाप–पुण्य की अवधारणा का विरोध किया। अम्बेडकर ने कहा कि वर्ण–व्यवस्था, जाति–पांति, ऊँच–नीच, छोटे–बड़े की भावना मानवता के लिए अभिशाप है। यह विज्ञान सम्मत नहीं है। डॉ. अम्बेडकर 'अपः दीपोः भवः' में विश्वास करते थे और उनकी मान्यता थी कि कोई बाहरी शक्ति, चमत्कार, अवतार या पैंगम्बर दलितों का उद्धार करने नहीं आएगा। उन्हें अपने भीतर से ही बुद्ध की तरह ज्ञान अर्जित कर, उससे ऊर्जा प्राप्त कर नायकत्व प्राप्त करना होगा। उन्हें खुद अपना, अपने समाज का, पूरी मानवता के विकास के लिए प्रयास करना होगा। डॉ. अम्बेडकर के इन सभी विचारों की छाया हमें दलित साहित्य में देखने को मिलती है। डॉ. माता प्रसाद के अनुसार, ''दलित साहित्य डा. अम्बेडकर के विचारों से प्रेरित है। यह भाग्य, ईश्वर, पुनर्जन्म, अन्धविष्वास, पूजा–पाठ, कर्मकाण्ड, स्वर्ग–नरक, पाप–पुण्य की अवधारणा को नहीं मानता। यह वर्ण व्यवस्था जाति पांति, ऊँच–नीच, छोटे–बड़े की भावना का विरोधी है। यह विज्ञान सम्मत विचारों, समता, स्वतंत्रता, लोकतंत्र, विष्व बंधुत्व और न्याय का पक्षधर है।''[10]डॉ. अम्बेडकर दलित समाज के लिए एक ऐसे सूरज के रूप में हैं, जिसने सदियों से गुलामी के अंधेरे में रहने वाले दलित समाज के यहाँ प्रकाश किया है। डॉ. अम्बेडकर का कथन है कि गुलाम को उसकी गुलामी का एहसास करवा दिया जाए तो वह गुलामी से मुक्त हो जाएगा। दामोदर मोरे डॉ. अम्बेडकर का उदय एक नये सूरज के रूप में देखते हुए लिखते हैं:–

''यह आश्चर्य की बात नहीं है।''

एक नये सूरज ने, बहार को

गाँव के बाहर का

मेरे घर का पता दिया है।''[11]

छूआछूत और असमानता मानव सभ्यता पर कलंक हैं। डॉ. अम्बेडकर एक ऐसे समाज की रचना करना चाहते थे, जिसमें सभी समान हों। धर्म, जाति, वर्ण, वर्ग, आदि के आधार पर मानव–मानव में कोई भी भेद नहीं हो। उनके दर्शन में आत्मा–परमात्मा, स्वर्ग–नरक, अवतारवाद जैसी बातें सम्मिलित नहीं हैं। उनके दर्शन में मनुष्य का स्थान सर्वोपरी है। सूर्यनारायण रणसुंभे के अनुसार, ''यह सही है कि सवर्णों के अमानवीय व्यवहार

के कारण इनकी संवेदनाएँ मर चुकी थी। भूख के अलावा और किसी भी प्रकार की जरूरतों को इनमें उभरने नहीं दिया गया। श्रम और भूख, भूख और श्रम यहों तक इन्हें सीमित कर दिया गया। परन्तु बाबा साहब डॉ. भीमराव अम्बेडकर के प्रयत्नों के कारण इस वर्ग में धीरे–धीरे ही क्यों न हो अपने अस्तित्व को लेकर सोच की शक्ति उभरने लगी है।''[12] अम्बेडकर ने साहित्य को सामाजिक बदलाव का आधार माना है। उन्होंने 1954 में साहित्यकारों का मार्गदर्शन करते हुए कहा था, ''अपने इस देश में उपेक्षितों का, दलितों का बहुत बड़ा विश्व है, इसे मत भूलिए। उनका दुख, उनकी व्यथा ठीक तरह से समझकर अपने साहित्य के द्वारा उनका जीवन उन्नत करने के लिए प्रयास कीजिए।''[13] डॉ. विमल कीर्ति ने अम्बेडकर को दलित साहित्य का प्रेरणा स्त्रोत मानते हुए लिखा है, ''दलित साहित्य की प्रेरणा भी अम्बेडकरवाद ही है। वही उसका आधार है। डॉ. अम्बेडकर के दलित मुक्ति आन्दोलन से ही दलित साहित्य की नींव पड़ी है। इसलिए यह कहना कि सामाजिक न्याय की अवधारणा दलित साहित्य को सकारात्मक प्रोत्साहन दे रही है, गलत नहीं होगा।''[14] डॉ. गंगाधर पानतावणे दलित साहित्य की प्रेरणा केवल अम्बेडकरवाद को मानते हुए लिखते हैं, ''दलित साहित्य की प्रेरणा न मार्क्सवाद है, न हिंदूवाद, न निग्रो साहित्य है। दलित साहित्य की प्रेरणा केवल अंम्बेडकरवाद है।''[15] दलित कविता में डॉ. अम्बेडकर के प्रति सम्मान व्यक्त किया गया है। सभी दलित कवियों ने अपनी रचना का प्रेरणा–पुंज डॉ. अम्बेडकर को माना है। दलित कवि रणजीत सिंह इन शब्दों में अम्बडकर को प्रणाम करते हैं:–

''जिस भीम ने हमको उबारा

उस भीम को शत शत प्रणाम।

जिस भीम ने जीवन दिया

उस भीम को शत शत प्रणाम।।''[16]

डॉ. अम्बेडकर के अनुसार समता (समानता), आजादी, भाईचारा लक्ष्य नहीं,मानव बल्कि जन्मसिद्ध अधिकार है। इन्हें हासिल करने के लिए दलित समाज को शिक्षित होना, संगठित होना और संघर्षरत होना लाजिमी है। वे 'अतः दीपोः भवः में विश्वास करते थे और मानते थे कि कोई बाहरी व्यक्ति, शक्ति, चमत्कार अथवा अवतार या पैंगबर उनको नहीं उबारेगा। उन्हें अपने भीतर से ही बुद्ध की तरह ज्ञान अर्जित कर, उससे ऊर्जा प्राप्त कर, नायकत्व हासिल करना होगा। उन्हें खुद अपनी, अपने समाज की, पूरी मानवता के विकास की मुहिम चलानी होगी। वे मानते थे कि गुलाम को अहसास करवा दो कि वह गुलाम है, वह मुक्त हो जाएगा। मार्क्स के अनुसार भी यह अहसास होने पर कि 'उसके पास गंवाने को कुछ नहीं, सिवाय अपनी बेड़ियों के' क्रांति होगी। दलित कवि अपनी कृतियों में इन्हीं विषयों को प्रमुखता देता है आर गुलाम समाज को मुक्त कराने, शिक्षित करने, संघर्ष पर उतारने, संगठित करने का सपना पालता है, खुद नायक बनकर अपने को मानवता के समकक्ष खड़ा करने का मंसूबा पालता है। वह सामाजिक बराबरो ही नहीं आर्थिक बराबरी, पेशा चुनने की स्वतंत्रता, सत्ता में भागीदारी, सब चाहते हैं।

दलित साहित्य ने पिछले कुछ सालों में काफी नाम कमाया है। किताबों का प्रकाशन लगभग बहुत बढ़ गया है। इसने विविध साहित्यिक विधाओं को भी गले लगाया है। कविता–कहानी के साथ–साथ कुछ उपन्यास भी आए हैं। गीत और गजल में भी अब दलित साहित्य पीछे नहीं है लेकिन समय के साथ दलित–साहित्य में राजनीति के वे सारे दुर्गुण आ गए हैं, जिनके कारण दलित–साहित्यकार गुटबन्दी का शिकार भी हुए हैं। दलित साहित्यकार डॉ. अम्बेडकर के जीवन–दर्शन को लेकर काफी गंभीर दिखाई देते हैं परन्तु इस बात से भी इंकार नहीं किया जा सकता कि असल जिन्दगी में वे उनके सिद्धान्तों को पूरी तरह अपना नहीं पाए हैं। सामाजिक आन्दोलन में भी यही समस्या है। हमने सभी महापुरुषों के लिए दिन निश्चित कर लिया है। नियत दिन पर उनके आदर्शों की चर्चा बहुत जोर–शोर से करते हैं, परन्तु उसके बाद उन्हें भूल जाते हैं। ऐसी ही स्थिति दलित साहित्य में भी दिखाई देती है। डॉ. एन. सिंह इस स्थिति को उजागर करते हुए अपनी कविता 'मुझे भगवान मत बनाओ' में लिखते हैं:–

''मेरे बाद
फिर कभी ऐसा न हो
इसलिए लड़ा हूँ मैं
बहुत कच्ची जमीन पर खड़े होकर
तुम्हारे हितों के लिए
विरोध और अपमान के
प्रहार को झेला है
बुद्धि केवल बुद्धि के कवच पर
सामाजिक सम्मान कि इस पगडंडी के
निर्माण में
कितनी बार लहूलुहान हुए हैं
मेरे हाथ, मन और चेतना
अपने उन्हीं लहूलुहान हाथों को
तुम्हें जो आया था मैं
छः दिसंबर, उन्नीस सौ छप्पन को,
ताकि बना सको तुम
इस पगडंडी को राजमार्ग
जिस पर चल सकें
मेरी संताने बेखौफ होकर
लेकिन आज मेरी संताने
वर्ष में एक बार पूजती हैं मुझे
देवता बनाकर
और बांट लेती हैं
राजनीतिक लड्डूओं का प्रसाद
आपस में ही
मुझे इंसान ही रहने दो
देवता न बनाओ
मेरी पूजा न करो
मेरे छोड़े हुए अधूरे काम को
पूरा करो।''[17]

साराशतः कहा जा सकता है कि वर्तमान दौर में लिखी जा रही दलित कविताएँ सहानुभूति का कम, भोगे हुए यथार्थ का भावनात्मक अधिक है। इसका स्वर आक्रोश से भरा हुआ है, मगर सच्ची संवेदना और गहरे दर्द का प्रमाण है। हम यह कह सकते हैं कि हिंदी की दलित कविता भारतीय समाज की विसंगतियों, दलितों के साथ हो रहे जातिवादी भेदभावों व अमानवीय अत्याचारों के प्रति विरोध की कविता है। यह सम्पूर्ण समाज परम्परागत व्यवस्था को बदलकर समतामूलक समाज और मानवता की पक्षधर है। अब क्योंकि दलित साहित्य की यह अवधारणा सर्वमान्य है कि यह प्रतिरोध का साहित्य है, इसलिए वह सभी समाज विरोधी परंपराओं और मान्यताओं पर प्रहार करने से नहीं चूकता। दलित कविता का विद्रोह सामाजिक विसंगतियों की प्रखर चेतना को मुखरित करता है। शिक्षा का अभाव दलितों की स्थिति को और दयनीय बना देती हैं। डॉ. भीमराव अम्बेडकर का बयान 'शिक्षा शेरनी का दूध होती है' दलितों को शिक्षा की ओर आकर्षित करने के लिए दिया होगा। लेकिन जातिवादी वातावरण उनको शिक्षा हासिल करने में रोड़ा बनते हैं। डॉ. अम्बेडकर वज्ञानिक सोच को स्वीकार करते हैं। उन्होंने भाग्य, भगवान, पुनर्जन्म, अन्धविश्वास, पूजा–पाठ, कर्मकाण्ड, स्वर्ग–नरक, पाप–पुण्य की अवधारणा का विरोध किया। अम्बेडकर ने कहा कि वर्ण–व्यवस्था, जाति–पांति, ऊँच–नीच, छोटे–बड़े की भावना मानवता के लिए अभिशाप है। यह विज्ञान सम्मत नहीं है। डॉ. अम्बेडकर 'अपः दीपोः भवः' में विश्वास करते थे और उनकी मान्यता थी कि कोई बाहरी शक्ति, चमत्कार, अवतार या पैंगम्बर दलितों का उद्धार करने नहीं आएगा। उन्हें अपने भीतर से ही बुद्ध की तरह ज्ञान अर्जित कर, उससे ऊर्जा प्राप्त कर नायकत्व प्राप्त करना होगा। उन्हें खुद अपना, अपने समाज का, पूरी मानवता के विकास के लिए प्रयास करना होगा। डॉ. अम्बेडकर के इन सभी विचारों की छाया हमें दलित साहित्य पर देखने को मिलती है।

सन्दर्भ–सूची

1. ओम प्रकाश वाल्मीकि, 'दलित साहित्य का सौन्दर्यशास्त्र', पृ. सं. 29–30
2. डॉ. डी. आर. जाटव, 'डॉ. अम्बेडकर एक प्रखर विद्रोही', पृ. सं. 73
3. दलित साहित्य 2011 (वार्षिकी), पृ. सं. 376
4. डॉ. एन. सिंह, 'दलित साहित्य और युगबोध', (डॉ. तेजसिंह का लेख) पृ. सं. 33
5. डॉ. पुरुषोत्तम सत्यप्रेमी, 'दलित साहित्य रचना और विचार', (दीपक मौर्य का आलेख) पृ. सं. 42
6. माता प्रसाद, 'हिन्दी काव्य में दलित काव्यधारा', पृ. सं. 233
7. डॉ. पुरुषोत्तम सत्यप्रेमी, 'दलित साहित्य रचना और विचार', पृ. सं. 9–10
8. शरण कुमार लिम्बाले, 'दलित साहित्य का सौन्दर्यशास्त्र', पृ. सं. 59
9. कंवल भारती, दलित कविता की आंबेडकरवादी चेतना का उत्तरोत्तर विकास https://www-forwardpress-in/2022/10/literature&dalit&historical&perspective-6
10. माता प्रसाद, 'हिन्दी काव्य में दलित काव्यधारा', पृ. सं. 19
11. प्रा. दामोदर मोरे, 'सदियों के बहते जख्म', पृ. सं. 41
12. डॉ. ठाकुर प्रसाद राही, 'दलित साहित्य रचना और विचार', पृ. सं. 28
13. डॉ. बाबा साहब अम्बेडकर, 'राईटिंग्स एण्ड स्पीचेज', भाग–10, पृ. सं. 127
14. दलित दखल (डॉ. विमल कीर्ति का आलेख) डॉ. श्यौराजसिंह 'बेचैन', रजत रानी 'मीनू', पृ. सं. 108
15. ओम प्रकाश वाल्मीकि, 'दलित साहित्य का सौन्दर्यशास्त्र', पृ. सं. 30
16. रणजीत सिंह, 'ललकार', प्रकाशक– प्रेमवती, आर.के. पुरम, नयी दिल्ली, पहला संस्करण, 1985, पृ. सं. 15
17. डॉ. एन. सिंह, (संघर्ष के स्वर) संपादक श्यामलाल शमी, साहित्य संस्थान, लोनी बॉर्डर, गाजियाबाद, प्रथम संस्करण, 2006 पृष्ठ संख्या 191–192